

लेखक परिचय : जैनेंद्र कुमार जी का जन्म २ जनवरी १९०५ को अलीगढ़ (उत्तर प्रदेश) में हुआ। प्रारंभिक शिक्षा ऋषभ ब्रह्मचर्याश्रम, हस्तिनापुर में हुई। उच्च शिक्षा के लिए काशी हिंदू विश्वविद्यालय में प्रवेश लिया था लेकिन १९२० में असहयोग आंदोलन में सहभागी होने के कारण शिक्षा छोड़ दी। आप हिंदी उपन्यास के इतिहास में मनोविश्लेषणात्मक परंपरा के प्रवर्तक माने जाते हैं। आपकी कहानियाँ किसी-ना-किसी ऐसे मूल विचार तत्त्व को जगाती हैं जो जीवन की समस्याओं की अतलस्पर्शी गहराई में सोई रहती हैं। आप पद्मभूषण से सम्मानित हैं। जैनेंद्र जी की मृत्यु १९८८ में हुई।

प्रमुख कृतियाँ : 'त्यागपत्र', 'कल्याणी' (उपन्यास), 'पाजेब', 'वातायन', 'नीलम देश की राजकन्या' (कहानी संग्रह) 'पाप और प्रकाश' (नाटक), 'मेरे भटकाव', 'ये और वे' (संस्मरण), 'साहित्य और संस्कृति' (आलोचना) आदि।

विधा परिचय : 'कहानी' गद्य साहित्य की रोचक तथा अन्यतम विधा मानी जाती है। मानवीय संवेदना की अभिव्यक्ति तथा जीवन के यथार्थ का प्रस्तुतीकरण कहानी में होता है। मनोरंजन के साथ-साथ किसी-न-किसी घटना का चित्रण करना कहानी की विशेषता है। जीवन की विभिन्न समस्याओं और उनके समाधानों को कहानियों में उजागर किया जाता है। समाज में व्याप्त कुरीतियों, रूढ़ियों तथा आडंबरों को समाप्त कर श्रेष्ठ समाज की स्थापना करना कहानियों का उद्देश्य होता है।

पाठ परिचय : प्रस्तुत पाठ प्रतीकात्मक कहानी है। सृष्टि निर्माता के प्रतीक 'वन' में मौजूद जीव-जंतु तथा वनस्पति भी विशिष्ट प्रवृत्तियों के द्योतक हैं। 'बुद्धि', 'शक्ति' तथा 'ज्ञान' के अहंकार में चूर मनुष्य स्वयं को सबसे श्रेष्ठ समझता है। प्रस्तुत कहानी के माध्यम से लेखक बताना चाहते हैं कि प्रकृति द्वारा निर्मित पेड़-पौधे, पशु-पक्षी, इनसान अपनी-अपनी जगह महत्त्वपूर्ण हैं। सभी का अस्तित्व इस सृष्टि के लिए अर्थपूर्ण है पर अंत में सभी को उस सर्वशक्तिमान के अस्तित्व को स्वीकार करना ही पड़ता है। यही सृष्टि का अंतिम सत्य है।

एक गहन वन में दो शिकारी पहुँचे। वे पुराने शिकारी थे। शिकार की टोह में दूर-दूर घूमे थे, लेकिन ऐसा घना जंगल उन्हें नहीं मिला था। देखते ही में दहशत होती थी। वहाँ एक बड़े पेड़ की छाँह में उन्होंने वास किया और आपस में बातें करने लगे।

एक ने कहा, “ओह, कैसा भयानक जंगल है !”

दूसरे ने कहा, “और कितना घना !”

कुछ देर बात कर विश्राम करके वे शिकारी आगे बढ़ गए। उनके चले जाने पर पास के शीशम के पेड़ ने बड़ से कहा, “बड़ दादा, अभी तुम्हारी छाँह में ये कौन थे ? वे गए ?”

बड़ ने कहा, “हाँ गए। तुम उन्हें नहीं जानते हो ?”

शीशम ने कहा, “नहीं, वे बड़े अजब मालूम होते थे। कौन थे, दादा ? पहले कभी नहीं देखा उन्हें।”

दादा ने कहा, “जब छोटा था तब इन्हें देखा था। इन्हें आदमी कहते हैं। इनमें पत्ते नहीं होते, तना-ही-तना

होता है। देखा, वे चलते कैसे हैं ? अपने तने की दो शाखों पर ही चलते चले जाते हैं।”

शीशम ने कहा, “ये लोग इतने ही ओछे रहते हैं, ऊँचे नहीं उठते ! क्यों दादा ?” दादा ने कहा, “हमारी-तुम्हारी तरह इनमें जड़ें नहीं होतीं। बड़े तो काहे पर ? इससे वे इधर-उधर चलते रहते हैं, ऊपर की ओर बढ़ना उन्हें नहीं आता। बिना जड़ न जाने वे जीते किस तरह हैं।”

इतने में बबूल, जिसमें हवा साफ छनकर निकल जाती थी, रुकती नहीं थी और जिसके तन पर काँटे थे, बोला, “दादा, ओ दादा, तुमने बहुत दिन देखे हैं। यह बताओ कि किसी वन को भी देखा है। ये आदमी किसी भयानक वन की बात कर रहे थे। तुमने उस भयावने वन को देखा है ?”

शीशम ने कहा, “दादा, हाँ सुना तो मैंने भी था। वह वन क्या होता है ?”

बड़ दादा ने कहा, “सच पूछो तो भाई, इतनी उमर हुई, उस भयावने वन को तो मैंने भी नहीं देखा। सभी जानवर



मैंने देखे हैं। शेर, चीता, भालू, हाथी, भेड़िया। पर वन नामक जानवर को मैंने अब तक नहीं देखा।” एक ने कहा, “मालूम होता है, वह शेर-चीतों से भी डरावना होता है।”

बड़ दादा ने कहा, “डरावना जाने तुम किसे कहते हो। हमारी तो सबसे प्रीति है।”

बबूल ने कहा, “दादा, प्रीति की बात नहीं है। मैं तो अपने पास काँटे रखता हूँ। पर वे आदमी वन को भयावना बताते थे। जरूर वह चीतों से बढ़कर होगा।” दादा, “सो तो होता ही होगा। आदमी एक टूटी-सी टहनी से आग की लपट छोड़कर शेर-चीतों को मार देता है। उन्हें ऐसे मरते अपने सामने हमने देखा है। पर वन की लाश हमने नहीं देखी। वह जरूर कोई बड़ा खौफनाक होगा।”

इसी तरह उनमें बातें होने लगीं। वन को उनमें से कोई

नहीं जानता था। आस-पास के पेड़, साल, सेमर, सिरस उस बातचीत में हिस्सा लेने लगे। वन को कोई मानना नहीं चाहता था। किसी को उसका कुछ पता नहीं था पर उसका डर सबको था। इतने में पास ही जो बाँस खड़ा था और जो जरा हवा पर खड़-खड़ करने लगता था, उसने अपनी जगह से ही सीटी-सी आवाज देकर कहा, “मुझे बताओ! क्या बात है? मैं पोला हूँ। मैं बहुत जानता हूँ।”

बड़ दादा ने गंभीर वाणी से कहा, “तुम तीखा बोलते हो। बात यह है कि बताओ, तुमने वन देखा है? हम लोग सब उसको जानना चाहते हैं।”

बाँस ने रीती आवाज से कहा, “मालूम होता है, हवा मेरे भीतर के रिक्त में वन-वन-वन-वन ही कहती हुई घूमती रहती है, पर ठहरती नहीं।”

बड़ ने कहा, “वंश बाबू, तुम घने नहीं हो, सीधे-ही सीधे हो। कुछ भरे होते तो झुकना जानते।

बड़ दादा ने उधर से आँख हटाकर फिर और लोगों से कहा कि हम सबको घास से इस विषय में पूछना चाहिए। उनकी पहुँच सब कहीं है। वह कितनी व्याप्त है और ऐसी बिछी रहती है कि किसी को उससे शिकायत नहीं होती।

तब सबने घास से पूछा, “तू वन को जानती है?”

घास ने कहा, “नहीं तो दादा, मैं उन्हें नहीं जानती। लोगों की जड़ों को ही मैं जानती हूँ। उनके फल मुझसे ऊँचे रहते हैं। पद तल के स्पर्श से सबका परिचय मुझे मिलता है। जब मेरे सिर पर चोट ज्यादा पड़ती है, समझती हूँ यह ताकत का प्रमाण है। धीमे कदम से मालूम होता है, यह कोई दुखियारा जा रहा है। दुख से मेरी बहुत बनती है, दादा! मैं उसी को चाहती हुई यहाँ-से-वहाँ तक बिछी रहती हूँ। सभी कुछ मेरे ऊपर से निकलता है। पर वन को मैंने अलग करके कभी नहीं पहचाना।”

दादा ने कहा, “तुम कुछ नहीं बतला सकती?”

घास ने कहा, “मैं बेचारी क्या बतला सकती हूँ, दादा!”

तब बड़ी कठिनाई हुई। बुद्धिमती घास ने जवाब दे दिया। वाग्मी वंश बाबू भी कुछ न बता सके और बड़ दादा स्वयं अत्यंत जिज्ञासु थे। किसी की समझ में नहीं आया कि वन नाम के भयानक जंतु को कहाँ से कैसे जाना जाए।

इतने में पशुराज सिंह वहाँ आए। बड़ दादा ने पुकारकर कहा, “ओ सिंह भाई, तुम बड़े पराक्रमी हो। जाने कहाँ-कहाँ छापा मारते हो। एक बात तो बताओ, भाई।”

शेर ने पानी पीकर गर्व से ऊपर को देखा। दहाड़कर कहा, “कहो, क्या कहते हो?”

बड़ दादा ने कहा, “हमने सुना है कि कोई वन होता है जो यहाँ आस-पास है और बड़ा भयानक है। हम तो समझते थे कि तुम सबको जीत चुके हो। उस वन से कभी तुम्हारा मुकाबला हुआ है? बताओ, वह कैसा होता है?”

शेर ने दहाड़कर कहा, “लाओ सामने वह वन, जो अभी मैं उसे फाड़-चीरकर न रख दूँ। मेरे सामने भला वह क्या हो सकता है?” बड़ दादा ने कहा, “तो वन से कभी तुम्हारा सामना नहीं हुआ?”

शेर ने कहा, “सामना होता तो क्या वह जीता बच सकता था। मैं अभी दहाड़ देता हूँ। हो अगर वन तो आए वह सामने। खुली चुनौती है। या वह है या मैं हूँ।” ऐसा कहकर उस वीर सिंह ने वह तुमुल घोर गर्जन किया कि दिशाएँ काँपने लगीं। बड़ दादा के देह के पत्र खड़-खड़ करने लगे। उनके शरीर के कोटर में वास करते हुए शावक चीं-चीं कर उठे। चहुँ ओर जैसे आतंक भर गया। पर वह गर्जना गूँज बनकर रह गई। हुँकार का उत्तर कोई नहीं आया। सिंह ने उस समय गर्व से कहा, “तुमने यह कैसे जाना कि कोई वन है और वह आस-पास रहता है। आप सब निर्भय रहिए कि वन कोई नहीं है, कहीं नहीं है, मैं हूँ, तब किसी और का खटका आपको नहीं रखना चाहिए।”

बड़ दादा ने कहा, “आपकी बात सही है। मुझे यहाँ सदियाँ हो गई हैं। वन होता तो दीखता अवश्य। फिर आप हो, तब कोई और क्या होगा। पर वे दो शाख पर चलने वाले जीव जो आदमी होते हैं, वे ही यहाँ मेरी छाँह में बैठकर उस वन की बात कर रहे थे। ऐसा मालूम होता है कि ये बे-जड़ के आदमी हमसे ज्यादा जानते हैं।”

सिंह ने कहा, “आदमी को मैं खूब जानता हूँ। मैं उसे खाना पसंद करता हूँ। उसका मांस मुलायम होता है लेकिन वह चालाक जीव है। उसको मुँह मारकर खा डालो, तब तो वह अच्छा है, नहीं तो उसका भरोसा नहीं करना चाहिए। उसकी गात-बात में धोखा है।”

बड़ दादा तो चुप रहे लेकिन औरों ने कहा कि सिंहराज, तुम्हारे भय से बहुत-से जंतु छिपकर रहते हैं। वे मुँह नहीं दिखाते। वन भी शायद छिपकर रहता हो। तुम्हारा दबदबा कोई कम तो नहीं है। इससे जो साँप धरती में मुँह गाड़कर रहता है, ऐसी भेद की बातें उससे पूछनी चाहिए। रहस्य कोई जानता होगा तो अंधेरे में मुँह गाड़कर रहने वाला साँप जैसा जानवर ही जानता होगा। हम पेड़ तो उजाले में सिर उठाए खड़े रहते हैं। इसलिए हम बेचारे क्या जानें।

शेर ने कहा, “जो मैं कहता हूँ, वही सच है। उसमें शक करने की हिम्मत ठीक नहीं है। जब तक मैं हूँ, कोई डर न करो। कैसा साँप! क्या कोई मुझसे ज्यादा जानता है?”

बड़ दादा यह सुनकर भी कुछ नहीं बोले। औरों ने भी कुछ नहीं कहा। बबूल के काँटे जरूर उस वक्त तनकर कुछ

उठ आए थे लेकिन फिर भी बबूल ने धीरज नहीं छोड़ा और मुँह नहीं खोला। अंत में जम्हाई लेकर मंथर गति से सिंह वहाँ से चला गया।

भाग्य की बात कि साँझ का झुटपुटा होते-होते घास में से जाते हुए दीख गए चमकीले देह के नागराज। बबूल की निगाह तीखी थी, झट से बोला, “दादा! ओ बड़ दादा, वह जा रहे हैं सर्पराज। ज्ञानी जीव हैं। मेरा तो मुँह उनके सामने कैसे खुल सकता है। आप पूछो तो जरा कि वन का ठौर ठिकाना क्या उन्होंने देखा है?”

बड़ दादा शाम से ही मौन हो रहते हैं। यह उनकी पुरानी आदत है। बोले, “संध्या आ रही है। इस समय वाचालता नहीं चाहिए।”

बबूल झक्की ठहरे। बोले, “बड़ दादा, साँप धरती से इतना चिपटकर रहते हैं कि सौभाग्य से हमारी आँखें उनपर पड़ती हैं। वर्ण देखिए न, कैसा चमकता है! यह सर्प अतिशय श्याम है। इससे उतने ही ज्ञानी होंगे। अवसर खोना नहीं चाहिए। इनसे कुछ रहस्य पा लेना चाहिए।”

बड़ दादा ने तब गंभीर वाणी से साँप को रोककर पूछा, “हे नाग, हमें बताओ कि वन का वास कहाँ है और वह स्वयं क्या है?” साँप ने साश्चर्य कहा, “किसका वास? वह कौन जंतु है? और उसका वास पाताल तक तो कहीं है नहीं।”

बड़ दादा ने कहा – “हम कोई उसके संबंध में कुछ नहीं जानते। तुमसे जानने की आशा रखते हैं। जहाँ जरा छिद्र हो, वहाँ तुम्हारा प्रवेश है। टेढ़ा-मेढ़ापन तुमसे बाहर नहीं है। इससे तुमसे पूछा है।”

साँप ने कहा, “मैं धरती के सारे गर्त जानता हूँ। वहाँ ज्ञान की खान है। तुमको अब क्या बताऊँ। तुम नहीं समझोगे। तुम्हारा वन, लेकिन कोई गहराई की सच्चाई नहीं जान पड़ती। वह कोई बनावटी सतह की चीज है। मेरा वैसी ऊपरी और उथली बातों से वास्ता नहीं रहता।”

बड़ दादा ने कहना चाहा कि ‘तो वन...’ साँप ने कहा, “वह फर्जी है।” यह कहकर वह आगे बढ़ गए।

मतलब यह है कि जीव-जंतु और पेड़-पौधे आपस में मिले और पूछ-ताछ करने लगे कि वन को कौन जानता है वह कहाँ है, क्या है? उनमें सबको ही अपना-अपना ज्ञान

था। अज्ञानी कोई नहीं था। पर वन का जानकार कोई नहीं था। ऐसी चर्चा हुई, ऐसी चर्चा हुई कि विद्याओं पर विद्याएँ उसमें से प्रस्तुत हो गईं। अंत में तय पाया कि दो टाँगोंवाला आदमी ईमानदार जीव नहीं है। उसने तभी वन की बात बनाकर कह दी है। वह बन गया है। सच में वह नहीं है।

उस निश्चय के समय बड़ दादा ने कहा, “भाइयो, उन आदमियों को फिर आने दो। इस बार साफ-साफ उनसे पूछना है कि बताएँ, वन क्या है? बताएँ तो बताएँ, नहीं तो खामख्वाह झूठ बोलना छोड़ दें। लेकिन उनसे पूछने से पहले उस वन से दुश्मनी ठानना हमारे लिए ठीक नहीं है। यह भयावना सुनते हैं। जाने वह और क्या हो।”

लेकिन बड़ दादा की वहाँ विशेष चली नहीं। जवानों ने कहा कि ये बूढ़े हैं, उनके मन में तो डर बैठा है और जंगल के न होने का फैसला पास हो गया।

एक रोज आफत के मारे फिर वे शिकारी उस जगह आए। उनका आना था कि जंगल जाग उठा। बहुत-से जीव-जंतु, झाड़ी-पेड़ तरह-तरह की बोली बोलकर अपना विरोध दर्साने लगे। आदमी बेचारों को अपनी जान का संकट मालूम होने लगा। उन्होंने अपनी बंदूकें सँभालीं।

बड़ दादा ने बीच में पड़कर कहा, “अरे, तुम लोग अधीर क्यों होते हो। इन आदमियों के खतम हो जाने से हमारा तुम्हारा फैसला निर्भ्रम नहीं कहलाएगा। जरा तो ठहरो। गुस्से से कहीं ज्ञान हासिल होता है? मैं खुद निपटारा किए देता हूँ।” यह कहकर बड़ दादा आदमियों को मुखातिब करके बोले, “भाई आदमियो, तुम भी इन पोली चीजों का मुँह नीचा करके रखो जिनमें तुम आग भरकर लाते हो। डरो मत। अब यह बताओ कि वह वन क्या है जिसकी तुम बात किया करते हो? बताओ, वह कहाँ है?”

आदमियों ने अभय पाकर अपनी बंदूकें नीची कर लीं और कहा, “यह वन ही तो है जहाँ हम सब हैं।”

उनका इतना कहना था कि चीं-चीं-कीं-कीं सवाल पर सवाल होने लगे।

“वन यहाँ कहाँ है? कहीं नहीं है।”

“तुम हो। मैं हूँ। वह है। वन फिर हो कहाँ सकता है?”

“तुम झूठे हो।”

“धोखेबाज !”

“स्वार्थी !”

“खतम करो इनको ।”

आदमी यह देखकर डर गए। बंदूकें सँभालना चाहते थे कि बड़ दादा ने मामला सँभाला और पूछा, “सुनो आदमियों, तुम झूठे साबित होंगे तभी तुम्हें मारा जाएगा और अगर झूठे नहीं हो तो बताओ वन कहाँ है ?”

उन दोनों आदमियों में से प्रमुख ने विस्मय से और भय से कहा “हम सब जहाँ हैं वहीं तो वन है।”

बबूल ने अपने काँटे खड़े करके कहा, “बको मत, वह सेमर है, वह सिरस है, वह साल है, वह घास है, वह हमारे सिंहाराज हैं, वह पानी है, वह धरती है। तुम जिनकी छाँह में हो, वह हमारे बड़ दादा हैं। तब तुम्हारा वन कहाँ है ? दिखाते क्यों नहीं ? तुम हमको धोखा नहीं दे सकते।”

प्रमुख पुरुष ने कहा, “यह सब कुछ ही वन है।”

इसपर गुस्से में भरे हुए कई जानवरों ने कहा, “बात से बचो नहीं, ठीक बताओ, नहीं तो तुम्हारी खैर नहीं है।”

अब आदमी क्या कहें, परिस्थिति देखकर वे बेचारे जान से निराश होने लगे। अपनी मानवी बोली (अब तक प्राकृतिक बोली में बोल रहे थे) एक ने कहा, “यार ! कह क्यों नहीं देते कि वन नहीं है। देखते नहीं, किनसे पाला पड़ा है !” दूसरे ने कहा, “मुझसे तो कहा नहीं जाएगा।”

“तो क्या मरोगे ?”

“सदा कौन जीया है। इसमें इन भोले प्राणियों को भुलावे में कैसे रखूँ ?”

यह कहकर प्रमुख पुरुष ने सबसे कहा, “भाइयो, वन कहीं दूर या बाहर नहीं है। आप लोग सभी वन हो।” इसपर फिर गोलियों-सी सवालों की बौछार उनपर पड़ने लगी। “क्या कहा ? मैं वन हूँ ? तब बबूल कौन है ?”

“झूठ ! क्या मैं यह मानूँ कि मैं बाँस नहीं, वन हूँ। मेरा रोम-रोम कहता है, मैं बाँस हूँ।”

“और मैं घास !”

“और मैं शेर !”

“और मैं साँप !”

इस भाँति ऐसा शोर मचा कि उन बेचारे आदमियों की अकल गुम होने को आ गई। बड़ दादा न हों तो आदमियों का काम वहाँ तमाम था।

उस समय आदमी और बड़ दादा में कुछ ऐसी धीमी-धीमी बातचीत हुई कि वह कोई सुन नहीं सका। बातचीत के बाद पुरुष उस विशाल बड़ के वृक्ष के उपर चढ़ता दिखाई दिया। वहाँ दो नये-नये पत्तों की जोड़ी खुले आसमान की तरफ मुस्कराती हुई देख रही थी। आदमी ने उन दोनों को बड़े प्रेम से पुचकारा। पुचकारते समय ऐसा मालूम हुआ जैसा मंत्र रूप में उन्हें कुछ संदेश भी दिया है।

वन के प्राणी यह सब कुछ स्तब्ध भाव से देख रहे थे। उन्हें कुछ समझ में न आ रहा था। देखते-देखते पत्तों की वह जोड़ी उद्ग्रीव हुई। मानो उनमें चैतन्य भर आया। उन्होंने अपने आस-पास और नीचे देखा। जाने उन्हें क्या दिखा कि वे काँपने लगे। उनके तन में लालिमा व्याप गई। कुछ क्षण बाद मानो वे एक चमक से चमके। जैसे उन्होंने खंड को कुल में देख लिया कि कुल है, खंड कहाँ है।

वह आदमी अब नीचे उतर आया था और वनचरों के समक्ष खड़ा था। बड़ दादा ऐसे स्थिर-शांत थे, मानो योगमग्न हो कि सहसा उनकी समाधि टूटी। वे जागे। मानो उन्हें अपने चरमशीर्ष से कोई अनुभूति प्राप्त हुई हो।

उस समय सब ओर सप्रश्न मौन व्याप्त था। उसे भग्न करते हुए बड़ दादा ने कहा -

“वह है।”

कहकर वह चुप हो गए। साथियों ने दादा को संबोधित करते हुए कहा, “दादा ! दादा !!”...

दादा ने इतना ही कहा -

“वह है, वह है।”

“कहाँ है ? कहाँ है ?”

“सब कहीं है। सब कहीं है।”

“और हम ?”

“हम नहीं, वह है।”

(‘जैनेंद्र की कहानियाँ’ तीसरे भाग से)

शब्दार्थ :

तत्सत = वही सत्य है

सेमर = शाल्मली

सिरस = शिरीष वृक्ष

वाग्मी = बातूनी, बहुत बोलने वाला

तुमुल = घमासान

मंथर = धीरे-धीरे

झक्की = सनकी

गर्त = गड्ढा, खड्ड

उद्ग्रीव = जिसकी गरदन ऊँची उठी हुई हो

चरमशीर्ष = उच्चतम

स्वाध्याय

आकलन

१. लिखिए :

(अ) बड़ दादा के अनुसार आदमी ऐसे होते हैं -

- (१)
(२)
(३)

(आ) वन के बारे में इसने यह कहा -

- (१) बड़ दादा ने -
(२) घास ने -
(३) शेर ने -

(इ) घास की विशेषताएँ -

-
.....
.....

शब्द संपदा

२. (अ) पर्यायवाची शब्दों की संख्या लिखिए :

- | | | | | | |
|-----------|---|------------------------------|---|-------------------------|----------------------|
| जैसे | - | बादल | - | पयोधर, नीरद, अंबुज, जलज | <input type="text"/> |
| (१) भौंरा | - | भ्रमर, षट्पद, भँवर, हिमकर | | | <input type="text"/> |
| (२) धरा | - | अवनी, शामा, उमा, सीमा | | | <input type="text"/> |
| (३) अरण्य | - | वन, विपिन, जंगल, कानन | | | <input type="text"/> |
| (४) अनुपम | - | अनोखा, अद्वितीय, अनूठा, अमिट | | | <input type="text"/> |

(आ) निम्नलिखित शब्दों के विलोम शब्द तैयार कर उपसर्ग के अनुसार उनका वर्गीकरण कीजिए –

कामयाब

न्याय

मान

सत्य

गुण

मंजूर

मेल

यश

संग

	उपसर्ग	मूल शब्द	शब्द
उदा.	गैर	जिम्मेदार	गैर जिम्मेदार

	उपसर्ग	मूल शब्द	शब्द



३. (अ) 'अभयारण्यों की आवश्यकता', इस विषय पर अपने विचार लिखिए।

(आ) 'पर्यावरण और हम', इस विषय पर अपना मत लिखिए।



४. (अ) टिप्पणियाँ लिखिए –

(१) बड़ दादा

(२) सिंह

(३) बाँस

(आ) 'तत्सत' शीर्षक की सार्थकता स्पष्ट कीजिए।



५. जानकारी दीजिए :

(अ) जैनेंद्र कुमार जी की कहानियों की विशेषताएँ –

.....

(आ) अन्य कहानीकारों के नाम –

.....

६. निम्नलिखित रसों के उदाहरण लिखिए :

(१) हास्य

.....

(२) वात्सल्य

.....